साहित्यिक समाज की दशा, दिशा और चुनौतियां : ‘जमाने में हम’

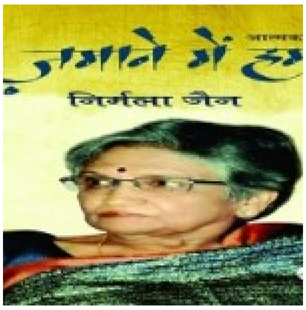

निर्मला जैन की आत्मकथा ‘जमाने में हम’ के मिलते ही मैंने उसे दो दिनों में ही पढ़ डाला. लेकिन उन्हें पढ़ते हुए कहीं भी ऐसा नहीं लगा कि में उनके व्यक्तित्व और लेखन किसी भी विमर्श की सीमाओं में बांध सकता हूँ. .यह पुस्तक इतनी विविधता , सृजनात्मकता, विस्तार और गहराई लिए हुए है कि पाठक इस आत्मकथा की रौशनी में साहित्य समाज की अवधारणा, भ्रम, प्रश्न, दशा, दिशा और उसकी चुनोतियों को सहजता से समझा जा सकता है. “ज़माने में हम” साहित्यकारों, अकेडमिक साहित्यकरो और शिक्षा जगत के ज्वलंत मुद्दों को उजागर ही नहीं करती बल्कि साहित्यिक गलियारे की राजनीति, लेखन और प्रकाशन के अंतर्निहित संबंधो को बारीकी से दिखाया गया है.

लेखिका का जीवन भी उन्हीं साधारण परिवार में होने वाली पारिवारिक जद्दोजहद से संघर्ष करता हुआ आगे बढ़ता है.जिस प्रकार एक आम महिला संघर्ष करती है. लेकिन जब हम लेखिका के उस दौर पर नजर डालते हैं तब जाकर महसूस होता है कि निर्मला जैन ने आज से कहीं ज्यादा जटिल समाज और अधिक चुनौतियों का सामना करते हुए अपने पैरों पर खड़ी हो पायीं.

निर्मला जैन का जीवन किसी न किसी पारिवारिक, सामाजिक और साहित्यिक संघर्षों से अछूता नहीं रह सका. न ही बचपन. उन्हें अपने नृत्य-प्रेम के कारण व्यंग बाण को सहन करना पड़ा. “दोनों साथ-साथ नहीं चलेंगे, या तो नाचना-गाना छोड़ दो या पढाई.” उसी नृत्य प्रेम ने निर्मला जैन के अंदर साहस पैदा किया और सभी को आश्चर्यचकित कर दिया. “मैं अड़ गयी नाचना नहीं छोडूंगी, स्कूल भले ही छोड़ना पड़े.”

1950 के दशक में शादी और दो बच्चे होने के बाद निर्मला जैन औसत मध्यम वर्गीय जीवन जीने को मजबूर थीं. इन हालातों में उनकी कठिनाईयों से किसी का कोई लेना देना नहीं था और लेखिका अंदर ही अंदर टूट रही थी. लेकिन अचानक एक दिन जिस प्रकार हनुमान को उसकी शक्ति का अहसास करा कर समुद्र पार भेज दिया जाता है, उसी प्रकार लेखिका की चाची ने हौंसला अफजाई की और उनमे साहस भर दिया “ मैं इस घटना को अपने जीवन का ऐतिहासिक क्षण मानती हूँ. मैंने उनसे तो इतना ही कहा कि मैं कोशिश करूंगी, पर मन ही मन साहस बटोरा, कुछ फैंसले किये... मन में बस इतना स्पष्ट था कि जीवन को पुनर्जीवित करना है.”

जीवन की जदोजहद ने निर्मला जैन को निडर, साहसी और स्पष्टवादी व्यक्तित्व का धनी बना दिया. इसी वजह से उन्होंने उस दौर के मशहूर कला विभाग अध्यक्ष डॉ. नगेन्द्र के बारे में तरह-तरह के किस्से

को भी बड़ी सहजता के साथ प्रस्तुत किया है. साहित्य जगत में राजनितिक सम्बन्ध भी भी बहुत मायने रखते है " जब हमने दिल्ली विश्वविद्यालय में में एंट्री ली तो वहां हिंदी के संदर्भ में जो कुछ थे, बस डॉ. नगेन्द्र थे और था उनका आभा मंडल- अविधा और लक्षणा दोनों अर्थों में... एक अर्थ में वे किंवदन्ती पुरुष थे. उनके बारे में प्रसिद्ध था कि आगरा विश्वविद्यालय में सीधे डी-लिट की उपाधि दी थी- पी.एचडी लांघकर. दूसरी प्रसिद्धि यह थी कि वे तत्कालीन राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्र प्रसाद की अनुकम्मा के पात्र थे... यह संबंध बाद में डॉ. साहब की पदोन्नति में बहुत कारगर साबित हुआ."

शुरुआत में डॉ. नागेन्द्र को निर्मला जैन अच्छी छात्रा नहीं लगीं. जिसकी चर्चा डॉ. सावित्री के माध्यम से की गई है कि जब डॉ. सावित्री ने मेरा उल्लेख उनके सामने किया तो डॉ. नागेन्द्र की प्रतिक्रिया थी " हमें तो कुछ जंची नहीं. शी इज मोर स्मार्ट . क्योंकि डॉ. नगेन्द्र की नजरों में सबसे होनहार लड़की उनके सहयोगी मित्र अंग्रेजी के कुंवरलाल वर्मा की छोटी बहन थी."

निर्मला जैन ने अनुभव किया कि डॉ. नागेन्द्र उनके साथ पक्षपात करते हैं. "मेरा वह पर्चा बहुत अच्छा हुआ था. मैं आश्वस्त थी सबसे ज्यादा अंक मुझे ही मिलेंगे, पर जब अंकतालिका हाथ में आई तो संतोष को मुझसे दो नम्बर ज्यादा मिले थे. मैं समझ गयी, डॉ. साहब ने मित्र धर्म का निर्वाह किया है."

खैर खट्टे मीठे अनुभव के बाद उनकी साहित्यिक गतिविधियां प्रारम्भ हो जाती हैं. निर्मला जैन एक ऐसा नाम था जिन्हे अपने समय के नये-पुराने साहित्यकर्मियों के साथ काम करने का मौका मिला जिस कारण उनकी साहित्यिक चेतना भी विकसित होने लगी थी. इसीलिए "जमाने में हम" की लेखिका इस बात का भी साहस और सहजता से वर्ण करती है कि 'अज्ञेय' को समझने में लम्बा समय लगा " वे दर्शक को आकर्षित नहीं आतंकित ज्यादा करते थे- अपनी सुपर बौद्धिक छाप से. यह समझने में लम्बा समय लगा कि वह उनका सहज नहीं, अर्जित-आरोपित व्यक्तित्व था जिसे उन्होंने बड़े मन से साधा था."

"ज़माने में हम" साहित्यिक जगत में होने वाले सम्मेलनों की गतिविधियों की बारीकी से जांच-पड़ताल करती है. प्रबुद्ध वर्ग कहे जाने वाले इस समाज में भी चापलूसी, पिछलग्गूपन महत्वपूर्ण स्थान रखता है. लेखिका का माना है कि एक तरफ अज्ञेय के पीछलग्गुओं के रूप में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और रघुवीर सहाय नजर आते है तो वही दूसरी तरफ अज्ञेय को पुनः मंच सुलभ कराने का अभियान सर्वेश्वर जी ने चला रखा था.

"जमाने में हम" साहित्यिककर्म में लगे लोगों के व्यक्तित्व की उन गहरी और महीन गतिविधियों पर पाठकों की चेतना को पहुंचा देती है जिस पर बहुत कम लिखा गया है. 'आयोजनों में निर्धारित समय के बाद आना अदा है ताकि श्रोताओं की जिज्ञासा को, बेकली अपनी पराकष्ठा पर पहुँच जाएँ. बाद में शाही अंदाज में एंट्री, निश्चय ही यह कारक योजना है."

निर्मला जैन ने देश के पाठकों के सामने साहित्य बोद्धिक वर्ग की एक ऐसी अकथ कहानी प्रस्तुत की है जिसके कारण "ज़माने में हम" आत्मकथा नहीं वरण आजादी के बाद हिंदी साहित्य की समीक्षा बन गयी है.

पुस्तक कुछ अनसुलझे प्रश्नों का भी समाधान करती है जैसे – समीक्षात्मक लेखन क्यों बंद हो गया ? काव्यशास्त्र की दिशा में लेखन क्यों बंद हो गया ? क्यों सिर्फ निजी पुस्तकालय संस्करण निकलने लगे ? बाद की पीढ़ी साहित्य के प्रति संवेदनहीन क्यों हो गयी ? क्यों समकालीन रचनाकारों के बीच संवाद भंग हो गया ?.

लेखिका इस बात का खुलासा भी करती है हिंदी साहित्य में चयन समित कैसे काम करती है. अपनी

लाबी को बड़ा करने के लिए किस प्रकार अध्यापकों की भर्ती की जाती है. क्यों पदोन्नति रोक दी जाती है. किस प्रकार साहित्यकार को साहित्य बिरादरी से बाहर किया जा सकता है. समझौता परस्ती और तानाशाही साहित्य जगत में एक साथ कैसे काम करती है.

आज बहुत से साहित्यकारों द्वारा साहित्य अकादमी पुरुस्कार लौटाया जा रहा है. साहित्य-जगत में इस् प्रतिक्रिया के पक्ष और विरोध में लोग खड़े हो गये है लेकिन साहित्य अकादमी की विश्वसनीय पर पहले से ही प्रश्न चिन्ह लगे हुए है. डॉ.नगेन्द्र को साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया जबकि अधिकतर साहित्यकार मुक्तिबोध को मरणोपरांत साहित्य अकादमी पुरस्कार देने के पक्ष में थे.

पुस्तक ने लेखक प्रकाशक सम्बन्धों जाने अनजाने में पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है कि दोनों के आपसी सम्बन्ध पुस्तक प्रकाशन में कितना महत्वपूर्ण रोल निभाती है. क्योंकि उन दिनों किसी बड़े लेखक का प्रकाशन से जुड़ना शिष्य के लिए राह आसान कर देता है. हिंदी साहित्य के नामी प्रकाशन राजकमल प्रकाशन का विक्रय प्रसंग भी लेखक, प्रकाशक और प्रकाशक के संबंधों को बहुत ही बारीकी से पाठकों के साथ साझा किया है.

पुस्तक नई कहानी के आन्दोलन की साहित्यिक राजनीतिक उठापटक की समझ पैदा करने में हमारी मदद कर सकती है. राजेन्द्र यादव, नामवर सिंह, मन्नू भंडारी, कमलेश्वर और देवीशंकर अवस्थी जैसे नामों के बीच वैचारिक, राजनीतिक और साहित्यिक चर्चाओं ने सम्पादन, प्रकाशन और पत्रिका आदि के औचित्य पर कई प्रश्नों को जन्म दिया है.

चिट्ठी-पत्री पुस्तक की विश्वसनीयता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. जिसने पुस्तक को और अधिक रोचक बनाया दिया है इन पत्रों में निर्मला जैन अपने समय के अधिकतर साहित्यकारों से सहजता, साहस और बेबाकी से अपनी बात रखती है. लेकिन अपनी साहित्यिक मर्यादा में.

“जमाने में हम” अपने नाम को बहुत हद तक सार्थक करती है क्योंकि यह निर्मल जैन की कहानी नहीं, दिल्ली की कहानी है. विश्वविद्यालय की कहानी है. साहित्यिकर्मियों की कहानी, प्रयोगवादी, छायावादी, नई कहानी, नई कविता की कहानी है.संपादक, संपादन, और प्रकाशक प्रकाशन की कहानी है. यह गुरु-शिष्य के साथ-साथ साहित्य और राजनीती के संबंधो की कहानी भी है.

लेखक : निर्मला जैन
प्रकाशक : राजकमल
कीमत : 295/750